International Journal of Applied Research 2019; 5(3): 293-294

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(3): 293-294
www.allresearchjournal.com
Received: 27-01-2019
Accepted: 28-02-2019

Dr. Deepti Kumari
Sanskrit Teacher, Directorate of Education, Delhi, India

Dr. Jyoti
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Shyama Prasad Mukherji, College for Women, University of Delhi, Delhi, India

Dr. Asheesh Kumar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Rajdhani College, University of Delhi, Delhi, India

Corresponding Author:
Dr. Asheesh Kumar
Assistant Professor, Department of Sanskrit, Rajdhani College, University of Delhi, Delhi, India

उपनयन संस्कार

Dr. Deepti Kumari, Dr. Jyoti and Dr. Asheesh Kumar

सारांश
प्रस्तुत लेख में संस्कारों का उद्देश्य एवं संख्या बताते हुए उसमें उपनयन संस्कार की चर्चा की गई है। इसके साथ ही उपनयन संस्कार की विधि का उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत लेख में न केवल प्राचीन संस्कारों की चर्चा की गई है अपितु उनमें वर्तमान समय में प्रचलित संस्कारों का भी उल्लेख किया गया है।
प्रस्तुत लेख के माध्यम से वर्तमान काल में उपनयन संस्कार के महत्व को जानने का प्रयास किया गया है । अधिकांशतः आज भी मनुष्य उपनयन परंपरा का निर्वहन कर रहे हैं। प्राचीन समय में शिक्षा पद्धति बहुत ही सुधीर हुआ करती थी। गुरु के द्वारा शिष्य को भलीभांति शिक्षा दी जाती थी एवं गुरु भी निस्वार्थ भाव से ज्ञान देता था प्रातः काल से सायंकाल पर्यंत निरंतर गुरु एवं शिष्य के बीच संवाद प्रक्रिया चला करती थी। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में इस संवाद का अभाव प्राप्त होता है।

'संस्कृत' शब्द प्राचीन वैदिक साहित्य में नहीं मिलता, किन्तु 'सम्' के साथ 'कृ' धातु से संस्कृत शब्द [1] बहुधा मिल जाता है। ऋग्वेद में 'संस्कृत' शब्द धर्म (बरतन) के लिए प्रयुक्त हुआ है। छान्दोग्य उपनिषद् [2] में 'मनसा संस्करोति ब्रह्मा वाचा होता' प्रयुक्त हुआ है। जैमिनी के सूत्रों [3] में संस्कार अनेक बार आया है और सभी स्थलों पर यज्ञ में पवित्र कार्यों के लिये वर्णित है। यथा – केश, दान्त, नाखून की स्वच्छता अर्थ में, प्रोक्षण अर्थ में।
शबर स्वामी [4] ने संस्कार की व्याख्या की है – 'संस्कारोनाम स भवति यस्मिन्जाते पदार्थो भवति योयः कस्यचिदर्थस्य अर्थात् जिसके होने से किसी कार्य हेतु व्यक्ति योग्य हो जाता है। वीरमित्रोदय के अनुसार – "यह एक विलक्षण योयता है जो शास्त्रविहित क्रियाओं के करने से उत्पन्न होती है।

संस्कारों का उद्देश्य
मनु [5] प्रारम्भ से मुंडन तक के संस्कारों का उद्देश्य माता–पिता के वीर्य एवं गर्भाशय के दोषों को दूर करना बताया है। वेदाध्ययन, व्रत, होम, त्रैविध व्रत, पूजा, संतानोत्पत्ति, पंचमहायज्ञों द्वारा मानव शरीर को ब्रह्म प्राप्ति के योग्य बनाया जाता है। वस्तुतः संस्कारों के उद्देश्य अनेक थे। उपनयन जैसे संस्कारों का महत्त्व था। आध्यात्मिक व सांस्कृतिक उद्देश्यों से तथा गुणसम्पन्न व्यक्तियों से सम्पर्क होता था व ज्ञान प्राप्ति करने की अनेक सुविधायें प्राप्त होती थी। उनका मनोवैज्ञानिक महत्त्व था, संस्कार करने वाला व्यक्ति एक नए जीवन का आरम्भ करता था, जिसके लिए वह नियमों के पालन के लिए प्रतिश्रुत होता था।

संस्कारों की संख्या
संस्कारों की संख्या के विषय में स्मृतिकारों में मतभेद रहा है। गौतम ने 40 संस्कारों का वर्णन किया है। मनु, याज्ञवल्क्य, विष्णुधर्मसूत्र ने कोई संख्या नहीं दी प्रत्युत निषेक (गर्भाधान) से लेकर श्मशान (अंत्येष्टि) तक के संस्कारों की ओर संकेत किया है। गौतम एवं कई गृह्यसूत्रों ने अन्त्येष्टि को नहीं गिना है। परन्तु निबंधों में अधिकांशतः 16 संस्कारों की संख्या दी हुई है, जिसमें अत्यंत महत्त्वपूर्ण उपनयन संस्कार भी है।

उपनयन संस्कार
उपनयन का अर्थ है – "पास या सन्निकट ले जाना"। किन्तु किसके पास ले जाना? संभवतः आरम्भ में इसका तात्पर्य था

1 ऋग्वेद 6/2/8/8
2 छान्दोग्य उपनिषद–4/16/2.2
3 जैमिनी सूत्र–3/8/3, 9/3/25
4 शबर स्वामी–3/1/3
5 मनु–2/27–28

आचार्य के पास (शिक्षा के लिए) ले जाना। हो सकता है इसका तात्पर्य नवशिष्य को विद्यार्थीपन की अवस्था तक पहुंचा देना रहा हो। मानव एवं काठक ने 'उपनयन' के स्थान पर 'उपायन' शब्द का प्रयोग किया है। काठक के टीकाकार आदित्यदर्शन ने उपायन, उपनयन, मौंजीबंधन, बटुकरण, व्रतबंध आदि को समानार्थक बताया है। यह संस्कार सब संस्कारों में अति महत्त्वपूर्ण है। 'उपनयन' शब्द के दो अर्थ होसकते हैं –

1) बच्चे को आचार्य के सन्निकट ले जाना।

२) वह कृत्य जिसके द्वारा बालक आचार्य के पास ले जाया जाता है।

आपस्तम्ब. [6] के अनुसार उपनयन एक संस्कार है जो विद्या सीखने के लिए किया जाता है। उपनयन के लिए उचित अवस्था एवं काल आश्वलायन गृह्यसूत्र [7] के मत से ब्राह्मणकुमार का उपनयन गर्भाधान या जन्म से लेकर आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का 11 वें में, वैश्य का 12 वें में होना चाहिए।

उपनयन–विधि

उपनयन विधि का विस्तार आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, गोभिल. में भी पाया जाता है –

"यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।।"

बोधायन का कहना है कि यज्ञोपवीत बटुक 'यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि' मंत्र बोलकर ही धारण किया जा सकता था। गोभिल. [8], मनु [9], बोधायन [10] तथा वैखानस [11] में दाहिने हाथ को उठाकर ,सिर को (उपवीत के) बीच में डालकर उस सूत्र को बाएं कंधे पर इस प्रकार लटकाते हैं कि वह दाहिनी ओर लटकता है; इस प्रकार वह यज्ञोपवीती हो जाता है। बोधायन [12] कहते हैं कि जब कंधे पर रखा जाता है तो दोनों कंधे एवं छाती (हृदय के नीचे किन्तु नाभि के ऊपर) तक रहते हुए दोनों हाथों के अंगूठों से पकड़ता है, इसे निवीता कहा जाता है। ऋषि तर्पण में, सम्भोग में, बच्चों के संस्कारों के समय (होम के समय नहीं), मल–मूत्र त्यागते समय, शव ढोते समय, यानी केवल मनुष्यों के लिए किये जाने वाले कार्य में प्रयोग होता है।

यज्ञोपवीत में तीन सूत्र होते हैं, जिनमें प्रत्येक सूत्र में नौ धागे (तंतु) होते हैं,जो भली भाँति बटे एवं माँजे हुए रहते हैं। मनु एवं विष्णुधर्मसूत्र के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य क्रमशः रुई, शण (सन) एवं ऊन का धारण करें।

आधुनिक काल में पुराना हो जाने पर या अशुद्ध हो जाने पर, कट या टूट जाने पर जब नवीन यज्ञोपवीत धारण किया जाता है तो संक्षिप्त कृत्य इस प्रकार होता है – यज्ञोपवीत पर तीन 'आपोहिष्ठा' [13] मन्त्रों के साथ जल छिड़का जाता है। इसके उपरान्त दस बार गायत्री (प्रति बार व्याहृतियों अर्थात् "ॐ भूर्भुवः स्वः" के साथ दुहराई जाती है और तब यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं के साथ यज्ञोपवीत धारण किया जाता है।

वर्तमान समय में प्रचलित संस्कार

आधुनिक समय में गर्भाधान, उपनयन एवं विवाह नामक संस्कारों को छोड़कर अन्य बहुधा नहीं किये ज रहे हैं। नामकरण एवं अन्नप्राशन संस्कार मनाए जाते हैं, बिना मन्त्रोच्चारण व पुरोहित को बुलाये।

स्मृत्यर्थसार के अनुसार उपनयन के अतिरिक्त संस्कार यदि निर्दिष्ट समय पर नहीं किये गये तो व्याहृतिहास के पश्चात् ही वे संपादित होगे और पादकृच्छ नामक प्रायश्चित करना होगा। इस प्रकार धीरे–धीरे लोगों ने उपनयन व विवाह को छोड़कर अन्य संस्कारों को कर्ण ही छोड़ दिया।

उपनयन संस्कार की उपयोगिता

वर्तमान में भी उपनयन संस्कार का बहुत महत्त्व है। आज भी जनेऊ पहनाया जाता है। अधिकांशतः आज भी मनुष्य इस परंपरा का निर्वहण कर रहे हैं। प्राचीन समय में शिक्षा पद्धति बहुत ही सुदृढ़ हुआ करती थी। गुरु के द्वारा शिष्य को भली–भांति शिक्षा दी जाती थी व गुरु भी निःस्वार्थ भाव से ज्ञान देता था प्रातः काल से सायंकाल पर्यंत निरंतर गुरु व शिष्य के बीच संवाद प्रक्रिया चलती रहती थी। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में इस संवाद का अभाव है। छात्रों को संवाद रूपी शिक्षा नहीं मिल पा रही है। उपनयन का जो अर्थ है – पास या सन्निकट। यह तो मानो समाप्त ही हो गया है। जनेऊ के तीन धागे हैं। वे तीन ऋण के प्रतीक हैं –

1) गुरु ऋण
2) पितृ ऋण
3) ऋषि ऋण

इन तीनों ऋणों का जितना महत्त्व प्राचीन समय में था उतना आज नहीं है। आज के समय में गुरु के पास इतना समय नहीं है की वे छात्रों को प्रातः काल से सायं काल पर्यंत पढ़ाते रहें। माता –पिता के साथ भी वैसी मातृत्व व पितृत्व भावना भी लगभग समाप्त हो गयी है। बच्चे माता–पिता को बुढ़ापे में भी अकेला छोड़ देते हैं। ऋषि ऋण आदि को भी लेकर वैसी प्रतिक्रियाएं नहीं दिखाते जैसा कि प्राचीन समय में था। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संस्कार आदि कोसमाज में माना जाता है परन्तु अपने–अपने ढंग से मनाया जा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आपस्तम्बधर्मसूत्रम्, डा. नरेन्द्र कुमार, विद्यानिधि प्रकाशन दिल्ली, 2010।
2. धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम भाग, पी.वी. काणे, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ।
3. बौधायनधर्मसूत्रम्, डा. नरेन्द्र कुमार, विद्यानिधि प्रकाशन दिल्ली, 1999।
4. मनुस्मृति, वासुदेव शर्मा, निर्णय सागर, मुंबई, 1838।

6 आपस्तम्ब. 1/1/1/19

7 आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/19/1–6

8 गोभिल. 1/2/2–4

9 मनु.–2/63

10 बोधायन–2/2/7

11 वैखानस–2/5

12 बोधायन–2/2/7

13 ऋग्वेद–10/1/1–3